223hi03

3

प्राचीन भारत

क्या आप सोचते हैं कि भारतीय लोगों की संस्कृति प्रारंभ से ही एक समान रही है? इसका उत्तर है 'नहीं'। कोई भी संस्कृति एक जैसी नहीं रहती। यह बात भारत के विषय में भी सच है। यह भी अनेक परिवर्तनों से गुजरी है। क्या आप जानते है कि ये परिवर्तन क्यों होते हैं? यह इसलिए क्योंकि प्रत्येक राजवंश, प्रत्येक आक्रमणकर्त्ता जो बाहर से आकर यहीं देश में बस जाते हैं, उस देश की संस्कृति पर अपनी छाप छोड़ देता है। भारतीय लोगों की वर्तमान संस्कृति को समझने के लिए उस प्रक्रिया को समझना आवश्यक है जिस माध्यम से इसको भूतकाल में गुजरना पड़ा है। अतः इस पाठ में हम प्राचीन भारत के लोगों के जीवन पर एक दृष्टि डालने का प्रयत्न करेंगे। आप यहां प्रागैतिहासिक काल से वैदिक, मौर्य और गुप्तकालीन भारतीय इतिहास के विविध पक्षों का अध्ययन करेंगे। समाज और संस्कृति में होने वाले परिवर्तनों के साथ साथ भारतीय समाज की बदलती प्रकृति पर भी बल दिया गया है। जब हम इतिहास पढ़ते हैं तो हम यह समझ पाते हैं कि कैसे विकास की लंबी शताब्दियां के बाद आधुनिक विश्व का उदय हुआ है। हमने प्राचीन काल में जो उपलब्धियाँ प्राप्त की, उनकी सराहना करना बहुत आवश्यक है जिससे हम अपने भविष्य को उपयोगी बना सकें।

उद्देश्य

इस अध्याय को पढ़ने के बाद आपः—

- इतिहास के अध्ययन का महत्त्व और उसकी प्रासंगिकता की सराहना कर सकेंगे;
- हड़प्पा कालीन सभ्यता को भारत की पहली नगरीय सभ्यता के रूप में पहचान सकेंगे;
- वैदिक समाज की प्रकृति, धर्म और दर्शन की प्रकृति का निरीक्षण कर सकेंगे;
- जैन और बौद्धधर्म के उदय के कारणों की व्याख्या कर सकेंगे;

- इस काल में दक्षिण भारत के प्राचीन इतिहास का क्रमिक रूप से वर्णन कर सकेंगे;
- आगामी वंशों के शासन काल के समय हुए महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक विकास की समीक्षा कर सकेंगे;
- प्राचीन भारत में सांस्कृतिक विकास की सामान्य गतिविधियों की जांच कर सकेंगे।

3.1 इतिहास के अध्ययन का महत्त्व

मुझे विश्वास है, आपने स्वयं से यह प्रश्न पूछा होगा कि तुम इतिहास क्यों पढ़ रहे हो? इतिहास का अध्ययन अपने बीते हुए समय को जानने का एक तरीका है। इतिहास हमें बताता है कि हमारे पूर्वज किस प्रकार और क्यों इस प्रकार का जीवन व्यतीत करते थे, उन्हें कौन-कौन सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा और कैसे उन्होंने उन पर विजय प्राप्त की। आपके लिए अपने भूतकाल से परिचित होना इसलिए भी आवश्यक है ताकि आप आज के भारत में जो कुछ भी हो रहा है उसको और भी अच्छी तरह जान सकें। आप अपने देश की कहानी को जान पाएंगे जो कई शताब्दियों पहले प्रारंभ हुई।

इतिहास अब केवल तिथियों और घटनाओं का अध्ययन मात्र नहीं रह गया है जो केवल राजनैतिक घटनाओं तक ही सीमित हो। इसके क्षेत्र में अब विस्तार हो गया है जिसमें जीवन के कई पक्ष भी समाहित हैं। इसमें जीवन की शैलियों का भी अध्ययन सम्मिलित है जिसे हम संस्कृति कहते हैं। पहले संस्कृति को कला, वास्तुशिल्प, साहित्य और दर्शन से सम्बद्ध कर परिभाषित किया जाता था परन्तु अब इसके अंतर्गत समाज की समस्त गतिविधियां समाहित हैं। अत: इतिहास का बल केवल उच्चवर्गीय लोगों तक सीमित न रह कर समाज के सभी वर्गों से जुड़ गया है। अब इसमें केवल राजाओं और राजनायकों के विषय में ही सूचनाएं नहीं होतीं बल्कि वह सामान्य व्यक्ति भी सम्मिलित है जो इतिहास बनाता है। इसमें कला और वास्तुविज्ञान, भारतीय भाषाओं का विकास, साहित्य और धर्म भी शामिल है। अब हम केवल समाज के सम्भ्रान्त वर्ग में क्या हो रहा था, इसको ही नहीं देखते बल्कि निम्न स्तरों पर भी लोगों की रुचियों और हितों का पुनर्निर्माण करने का प्रयत्न करते हैं। इससे इतिहास अधिक रोचक बन जाता है और समाज को समझने में और उसे उन्नत बनाने में हमारी सहायता भी करता है।

पहले तो, जिन लोगों ने हमारे समाज का निर्माण किया, सम्भ्रान्त वर्ग और सामान्य दोनों ही स्तरों पर, उनमें से अधिकांश लोग अन्य क्षेत्रों से आए और भारत में बस गए। उन्होंने यहां स्थानीय लोगों के साथ वैवाहिक संबंध बनाए, उनके साथ मिलजुलकर रहने लगे, और भारतीय समाज के अंग बन गए। अत: हमारा समाज विभिन्न प्रकार के लोगों की समृद्ध विरासत से युक्त है। लोगों की विपुल विभिन्नता के कारण ही यहां हमारे देश में अनेक प्रकार के धर्म, भाषाएं और रीतिरिवाज हैं।

इतिहास का शुद्ध अध्ययन दो बातों पर निर्भर है। एक तो उस संदर्भ सामग्री का आलोचनात्मक एवं ध्यानपूर्वक प्रयोग है जो हमें इतिहासकारों ने कुछ कथनों का समर्थन

करते हुए प्रदान की हैं, उनका तार्किक विश्लेषण करके ही समर्थन करना होगा। दूसरे ऐतिहासिक घटनाओं के कारण होते हैं और इन कारणों का भी संवीक्षण आवश्यक है। इन सबसे भी अधिक, हमें भूतकाल की भी समालोचनात्मक समीक्षा करनी होगी। इसी प्रकार ऐतिहासिक ज्ञान में वृद्धि हो सकेगी।

भारत का इतिहास कई हजार वर्ष पुराना है। इसके बारे में हमें उन प्रमाणों से पता लगता है जो हमारे पूर्वज पीछे छोड़ गए हैं। समीपवर्ती भूतकाल के विषय में तो हमारे पास लिखित और मुद्रित आलेख हैं। पर इससे भी पहले जब कागज का निर्माण नहीं हुआ था, आलेख सूखे ताड़ के पत्तों पर, भूर्जवृक्ष की छालों पर, तांबे की प्लेटों पर, और कुछ अवस्थाओं में बड़ी बड़ी शिलाओं पर, स्तम्भों पर, पत्थर की दीवारों पर और मिट्टी और पत्थर की बनी प्लेटों पर अंकित किए गए। इससे भी पहले एक समय था जब लिपि का भी आविष्कार नहीं हुआ था। उन पुरातन युगों के मनुष्यों के जीवन के बारे में हमें जानकारी उन वस्तुओं से प्राप्त होती है जो वे पीछे छोड़ गए हैं, उदाहरण के लिए मिट्टी के बर्तन, उनके अस्त्र शस्त्र और औजार आदि। ये वे वस्तुएं हैं जो ठोस हैं, जिन्हें आप छू सकते हैं, देख सकते हैं और जिन्हें वस्तुत: कभी-कभी धरती में से भी खोद कर निकाला गया है। ये ऐतिहासिक खजाने की तलाश के खेल में एक संकेत प्रदान करते हैं परन्तु ये सभी संस्कृति के अंग हैं। लेकिन, यह संकेत भी कई प्रकार के हो सकते हैं। जो संकेत सर्वाधिक प्रयुक्त होते हैं, वे हैं पाण्डुलिपियां। ये पाण्डुलिपियां प्राचीन पुस्तकें हैं जो या तो सूखे ताड़ के पत्तों पर या भूर्ज वृक्ष की मोटी छाल पर या कागज पर लिखी गई हैं। सामान्यतया दूसरे किस्म की पाण्डुलिपियां बच पाई हैं यद्यपि कागज पर लिखी पाण्डुलिपियां अन्य की भांति अधिक प्राचीन नहीं हैं। कुछ भाषाएं जिनमें बहुत प्राचीन पुस्तकें लिखी गई हैं, ऐसी भाषाएं हैं जिन्हें हम दैनिक व्यवहार में उपयोग में नहीं लाते जैसे पालि और प्राकृत। कुछ संस्कृत और अरबी में लिखी गई हैं जो आज भी पढ़ी जाती हैं जिन्हें हम कभी कभी धार्मिक कृत्यों के अवसर पर प्रयोग में लाते हैं यद्यपि वे घरों में प्रयुक्त नहीं होती। एक अन्य भाषा है तमिल जो दक्षिणी भारत में आज भी बोली जाती है और जिसका साहित्य भी बहुत प्राचीन काल का है, ये शास्त्रीय भाषाएँ कहलाती हैं। विश्व के अनेक प्रदेशों का इतिहास विभिन्न शास्त्रीय भाषाओं में निबद्ध है। यूरोप में प्राचीन पाण्डुलिपियां प्राय: ग्रीक और लैटिन भाषाओं में लिखी गई हैं। पश्चिमी एशिया में अरबी और हीब्रू में लिखी गईं, और चीन में शास्त्रीय चीनी भाषा का भी प्रयोग होता रहा।

3.2 प्राचीन भारत

भारत का एक दीर्घकालीन लम्बा इतिहास रहा है। बलूचिस्तान के मेहरगढ़ में ईसा से 7000 वर्ष पूर्व नव प्रस्तर युग के निवासियों का पता चला है तथापि भारत में 2700 वर्ष ईसा पूर्व ही भारत के उत्तर पश्चिमी के एक बहुत बड़े भाग में पहली उल्लेखनीय सभ्यता फली फूली। यह सभ्यता हड़प्पन सभ्यता कहलाती है। इस सभ्यता का विकास अधिकतर सिंधु, घाघरा और इसकी सहायक नदियां के आसपास के क्षेत्रों में हुआ।

हड़प्पा कालीन सभ्यता के साथ जुड़ी संस्कृति ही भारत की प्रथम नगरीय संस्कृति के रूप में जानी जाती है। हड़प्पा निवासियों ने पूरी नगर योजना शौचालय व्यवस्था, नालियां, चौड़ी सुनियोजित सड़कें बनाईं। उन्होंने दोतल्ले के पक्की ईंटों के मकान बनाए जिनमें से प्रत्येक में स्नानगृह, रसोई और कुआं होता था। चारदीवारी से घिरे इन शहरों में विशाल स्नानगृह, अनाज के भण्डार घर और सभाभवन आदि भी थे।

हड़प्पा के ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले निवासियों का प्रमुख व्यवसाय कृषि था। शहर में रहने वाले लोगों ने अपने और विदेशी लोगों के साथ व्यापारिक संबंध विकसित किए और मेसोपोटेनिया जैसे दूसरे देशों के साथ भी संबंध स्थापित किए। वे बहुत अच्छे मिट्टी के बर्तन बनाते थे। विभिन्न स्थलों से अनेक प्रकार के बर्तन, खिलौने, मुद्राए और आकृतियां खुदाई में प्राप्त हुई हैं। हड़प्पा कालीन लोगों को धातुओं के विषय में तकनीकी जानकारी थी और वे धातु मिश्रण की तरकीब भी जानते थे। मोहेनजोदाड़ों से प्राप्त एक नर्तकी की कांस्य मूर्ति हड़प्पाकालीन लोगों की शिल्पकला और सौन्दर्यानुभूति का प्रमाण है। शंख, हाथीदांत, हड्डियों और पालिशदार बर्तनों का प्रयोग वे विभिन्न कलाओं और सामग्रीनिर्माण में करते थे। लोथल गुजरात के अहमदाबाद के धोलक तालुके में एक बंदरगाह था। यह एक बहुत सुनियोजित चारदीवारी नगरी भी थी। यह पश्चिमी देशों के साथ समुद्री व्यापार का महत्त्वपूर्ण केंद्र था। गुजरात में ही एक दूसरा महत्त्वपूर्ण केन्द्र था धौलावीरा। इसी प्रकार राजस्थान में कालीबंगा नगर था।

अनेक प्रकार की मुद्राएं जिन पर एक सींग वाले गेंडे (जिसे यूनिकार्न कहते हैं) पीपल के पत्ते, देवता आदि खुदे हुए हैं, हड़प्पन लोगों के धार्मिक विश्वासों पर रोशनी डालती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वे पौधों और पशुओं की पूजा करते थे और प्राकृतिक शक्तियां की उपासना करते थे। वे परवर्ती काल के शिव जैसे ही किसी देवता और अन्य देवताओं सहित एक मातृशक्ति की भी उपासना करते थे। वे सम्भवत: मृत्यु के उपरान्त दूसरे जन्म में और जादू टोनों में भी विश्वास करते थे। पशु आकृति वाली मुद्राएं जिन पर कुब्बड़ वाले बैल, हाथी और गेंडे आदि अंकित हैं, यह दर्शाती हैं कि वे लोग इन पशुओं को पवित्र मानते थे। अनेक मुद्राओं पर 'पीपल' भी अंकित है।

हड़प्पाकालीन लोगों को लिखना भी आता था और अनेक मुद्राओं पर किसी प्रकार की लिपि भी प्राप्त होती है परन्तु दुर्भाग्यवश आजतक कोई भी उस लिपि को पढ़ने में समर्थ नहीं हुआ। परिणामत: हमारा हड़प्पा कालीन लोगों के विषय में ज्ञान केवल पुरातात्त्विक प्रमाणों पर ही आधारित है। खुदाई में प्राप्त विभिन्न मुद्राओं पर बनी पुरुषों और स्त्रियों की आकृतियों से पता चलता है कि वे लोग सूत कातना और बुनना भी जानते थे। वे सम्भवत: कपास उत्पन्न करने वाले पहले लोग थे। मेसोपोटेमिया से प्राप्त सिन्धु मुद्राओं का बहुत बड़ा भाग यह सिद्ध करता है कि सिन्धु घाटी और मेसोपोटेमिया सभ्यता के बीच शायद व्यापारिक संबंध थे।

1800 ई. पू. तक हड़प्पा सभ्यता मिटने लगी थी। ऐसा क्यों हुआ इसका वास्तविक कारण कोई नहीं जानता।

3.3 वैदिक सभ्यता

हड़प्पन सभ्यता के विनाश के कुछ शताब्दियों बाद एक नई सभ्यता उसी क्षेत्र में जन्मी और धीरे-धीरे गंगा-यमुना के मैदानों तक फैलती चली गई। यह सभ्यता आर्य सभ्यता कहलायी। इस सभ्यता और पुरानी सभ्यता में कई महत्त्वपूर्ण अंतर थे।

आर्य लोग सिन्धु और अब लुप्त सरस्वती नदी के किनारों पर बसने लगे। उन्होंने उन देवीदेवताओं के सम्मान में अनेक ऋचाओं का निर्माण किया जिनकी वे पूजा करते थे। इन ऋचाओं का संकलन चार वेदों में किया गया–ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद। 'वेद' शब्द का अर्थ है पवित्र आध्यात्मिक ज्ञान। प्रारंभ में वेद मौखिक रूप से ही पढ़ाए जाते थे। क्योंकि प्रारंभिक आर्यो के विषय में जो कुछ भी हम जानते हैं वह सब वेदों पर ही आधारित है इसीलिए इस सभ्यता को वैदिक सभ्यता कहते हैं। वैदिक काल को दो भागों में विभाजित करते हैं पूर्व और उत्तर वैदिक काल। पूर्ववैदिक काल का प्रतिनिधित्व करता है ऋग्वेद और उत्तर वैदिक काल के अंतर्गत अन्य वेद, ब्राह्मण अरण्यक और उपनिषद् साहित्य समाहित है। रामायण और महाभारत दोनों महाकाव्य तथा पुराण (जिनका संकलन काफी बाद में हुआ) वैदिक युग के लोगों के जीवन और समाज के विषय में पर्याप्त प्रकाश डालते हैं। इस काल के ज्ञान के लिए उत्तर प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में पुरातात्विक प्रमाण भी प्राप्त हुए हैं।

> ऋग्वेद में इन्द्र की स्तुति में 250 मंत्र हैं, और 200 मंत्र अग्नि देवता की स्तुति में हैं। क्या आप जानते हैं कि अग्नि देवताओं और मनुष्यों के बीच का माध्यम है।

समाज और धर्म

वैदिक युग के लोगों ने अपना घुमक्कड़ी जीवन समाप्त कर दिया और वे विभिन्न बस्तियों में बसने लगे। वे 'जन' कहलाते थे और उनकी जमीन 'जनपद' कहलाती थी। यद्यपि आर्यसभ्यता पितृसत्तात्मक थी, नारियों के साथ सम्मान और आदर से व्यवहार किया जाता था। परिवार लघुतम सामाजिक ईकाई थी, अनेक परिवार मिल कर ग्राम बनाते थे, कई ग्रामों का 'विश' कहलाता था। अनेक ग्रामों का एक समूह कबीला जन कहलाता था जिस पर एक मुखिया राजन् शासन करता था। उसका मुख्य काम कबीले की बाहरी आक्रमणों से सुरक्षा करना, नियम तथा अनुशासन बनाए रखना होता था। उसकी सहायता दो सभाओं के सदस्य किया करते थे जिन्हें 'सभा' और 'समिति' कहा जाता था। पुरोहित धार्मिक कृत्यों का आयोजन करते थे और सेनानी सैनिक गतिविधियों की देखभाल करता था। राजन् का पद यूं तो पितृ पैतामहिक था परन्तु निर्बल और कार्य में अकुशल पाये जाने पर उसे हटाया भी जा सकता था।

उत्तर वैदिक युग में समाज चार वर्णों में विभक्त था–ब्राह्मण, क्षत्रिया वैश्य और शूद्र। इसे वर्ण व्यवस्था भी कहा जाता है। प्रारंभ में यह व्यवस्था विभिन्न कार्य करने वाली श्रेणियों को संकेतित करती थी परन्तु समय के साथ साथ यह व्यवस्था वंशानुगत तथा जटिल होती चली गई। अध्यापक ब्राह्मण कहलाते थे, शासक वर्ग क्षत्रिय, किसान, व्यापारी, बैंक का काम करने वाले वैश्य तथा कलाकार, शिल्पी, श्रमिक आदि शूद्र कहलाने लगे। बाद में व्यवसाय वंशानुगत और जटिल हो गया और एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय में जाना बहुत कठिन हो गया। इसी के साथ साथ समाज में ब्राह्मणवर्ग का प्रभुत्व बढ़ता चला गया।

उस समय की एक अन्य महत्त्वपूर्ण व्यवस्था थी चतुराश्रम व्यवस्था अर्थात् संपूर्ण जीवन का चार विशिष्ट भागों में विभाजन–ब्रह्मचर्य (गुरु के आश्रय में ब्रह्मचर्य का पालन, शिक्षा और अनुशासनपूर्ण जीवन), गृहस्थ (पारिवारिक जीवन), वानप्रस्थ (मोहमाया के जाल से धीरे धीरे मुक्त होने का समय), और संन्यास (संसार की मोहमाया से दूर आध्यात्मिक जीवन)। लेकिन यह व्यवस्था महिलाओं और निचली जाति के लोगों पर लागू नहीं होती थी। स्त्रियों का समाज में आदर था, उन्हें पर्याप्त स्वतंत्रता थी, शिक्षा प्राप्त कर सकती थीं और स्वयंवर के माध्यम से अपने जीवनसाथी का चुनाव भी कर सकती थीं। पर्दा और सती प्रथा प्रचलित नहीं थी। जीवन का परम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति था जो धर्म अर्थ और काम के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता था। बिना किसी फल की आशा के निष्काम कर्म का उपदेश भगवदगीता में भी दिया हुआ है।

प्रारंभिक वैदिक कालीन लोग प्राकृतिक शक्तियों की पूजा करते थे और उन्हें देवी–देवता समझते थे। इन्द्र, अग्नि, वरुण, मरुत आदि कुछ देवता थे और उषा, अदिति, पृथ्वी देवियां मानी जाती थीं। सूर्य संबंधी देवी और देवता सूर्या, सवितृ और पूषण हैं। मंत्रोधारण सहित यज्ञ किए जाते थे। देवताओं का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए अग्नि में घी और सामग्री डाली जाती थी और अग्नि देवताओं और मनुष्यों के बीच माध्यम माना जाता था। वैदिक लोग जनकल्याण के लिए व्यक्तिगत रूप में और सामूहिक रूप में भी प्रार्थनाएं किया करते थे।

उत्तर वैदिक काल में धार्मिक कृत्यों में परिवर्तन आया। पूर्ववैदिक काल के देवीदेवता इन्द्र, अग्नि, वरुण और मारूत् का महत्त्व कम हो गया और इनका स्थान अन्य तीन देवताओं ने ले लिया जिनमें ब्रह्मा सर्वोच्च माने जाते थे, विष्णु पालक और शिवसंहारक सहित यह त्रिमूर्ति पूजी जाने लगी। धर्म बहुत अधिक यज्ञमय हो गया। मंत्र जिन पर ब्राह्मणों का एकाधिकार था, अब प्रत्येक धार्मिक कृत्य का अंग माने जाने लगे। इससे ब्राह्मण बहुत शक्तिशाली हो गए और यज्ञ खर्चीले। यज्ञों में ऊपर के तीन वर्ण ही भाग ले सकते थे। राजा अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए अश्वमेध, राजसूय और वाजपेय यज्ञ किया करते थे। यह भी तथ्य बड़ा रोचक है कि 3000 वर्ष के बाद भी वैदिक युग के कुछ तत्त्व आज तक शेष हैं और भारतीय संस्कृति के अंग हैं। उत्तर वैदिक युग के अंत तक समाज में परिवर्तन होने लगा था। पहली बार लोग कुछ मान्यताओं पर चर्चा करने लगे थे जैसे सृष्टि का निर्माण, मृत्यु के बाद जीवन और जीवन का मर्म। इन विषयों पर उपनिषदों में विस्तार से चर्चा की गई।

भौतिक जीवन और अर्थव्यवस्था

आर्य लोग मुख्यतया खेतीहर किस्म के लोग थे। वे गौएं, घोड़ों, भेड़ बकरियों और कुत्तों को पालते थे। वे सामान्य भोजन जैसे दालें, अनाज, फल, दूध और दूध से बने पदार्थों का सेवन करते थे। वे 'सोम' नामक पेय भी पीते थे। शतरंज, रथों की दौड़ उन के मनोरंजन के साधन थे। प्रारम्भिक युग में मुद्रा विनिमय और कर आदि नहीं थे बल्कि स्वैच्छिक दान प्रचलित था। गौओं से समृद्धि को नापा जाता था। जैसे जैसे समय गुजरता गया, लोहे के व्यापक प्रयोग से उनके भौतिक जीवन में परिवर्तन आने लगा। लोहे की कुल्हाड़ियों से उन्होंने वनों को काटकर खेती योग्य भूमि का गंगा की तराई तक विस्तार कर लिया। लोहे के औजारों से और घोड़ों की सहायता से उन्हें युद्ध करने और शत्रु से अपनी रक्षा करने में मदद मिली। लोहे के औजारों से कई तरह के शिल्प और तकनीक, खाद्य पदार्थों की प्रचुर मात्रा में उपलब्धि और जनसंख्या वृद्धि से उनके कौशलों का विकास और शहरीकरण हुआ। शहरों और कस्बों का विकास होने लगा और भौगोलिक राज्यों का उदय हुआ। उम्दा गुणों वाले मिट्टी के बर्तन 'रंगीन भूरे मृद्भाण्ड' और 'काले चमकीले बरतन' कई स्थानों से प्राप्त हुए हैं। सिक्कों का चलन प्रारंभ हुआ। जमीन से और सामुद्रिक रास्ते से व्यापार किया जाने लगा जिससे भौतिक संपन्नता में वृद्धि हुई।

3.4 लोकप्रिय धार्मिक सुधार

ई. पू. 600 से ई. पू. 200 वर्ष का काल न केवल देश की राजनैतिक एकता के दृष्टिकोण से आवश्यक है बल्कि सांस्कृतिक एकता के दृष्टिकोण से भी महत्त्वपूर्ण है। प्राचीन भारत में ही अन्य महत्त्वपूर्ण धर्मों का उदय हुआ–जैन धर्म और बौद्ध धर्म जिन्होंने भारतीय जीवन और संस्कृति पर अपनी अमिट छाप छोड़ी। वैदिक धर्म पहले ब्राह्मणवाद के नाम से भी जाना जाता था क्योंकि ब्राह्मणों की उस युग में महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। बाद में इसे हिन्दु धर्म कहा जाने लगा। ब्राह्मणों ने यज्ञों के बाद बहुत अधिक दानराशि मांगना प्रारंभ कर दिया। इससे यज्ञ आदि अनुष्ठान महंगे हो गये। इसके अतिरिक्त ब्राह्मण अपने को अन्य लोगों से बड़ा समझने लगे और अभिमानी हो गये। इससे ब्राह्मणों की लोकप्रियता समाप्त हो गई और सुधारों की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी।

इसके अतिरिक्त कुछ और कारण भी थे जैसे क्षत्रियों की ब्राह्मणों की श्रेष्ठता के विरुद्ध प्रतिक्रिया तथा वैश्यों की भी समाज में अपनी स्थिति सुधारने के लिए मांग। वैदिक धर्म बहुत जटिल और कर्मकाण्डपरक हो गया था। पूर्व छठी शताब्दी में क्षत्रिय और गरीब जनता यज्ञों का खर्च सहन करने में असमर्थ थी, उन्होंने सुधारों की मांग की जिनके फलस्वरूप जैन धर्म और बुद्ध धर्म का उदय हुआ। इन दोनों नये जैन धर्म और बौद्ध धर्मों ने हिन्दुओं की कई रीतियों और धार्मिक विश्वासों को प्रभावित किया।

जैन धर्म के संस्थापक ऋषभदेव थे जो 24 तीर्थंकरों में सर्वप्रथम थे। अंतिम तीर्थंकर महावीर ने इस धर्म का विकास किया और जैन सिद्धांतों को अंतिम रूप प्रदान किया।

जैनी लोग कठोर तप और वैराग्य पर बल देते हैं। भगवान महावीर ने उन्हें पांच प्रतिज्ञाएं पालन करने के लिए कहा–असत्य न बोलना, अहिंसा का पालन करना, सम्पत्ति न खरीदना, चोरी न करना और ब्रह्मचर्य का पालन करना। उन्होंने लोगों को सही विश्वास, सही आचरण और सही ज्ञान के त्रिमुखी मार्ग पर चलने को कहा।

बाद में जैन धर्म दो सम्प्रदायों में बंट गया–श्वेताम्बर (सफेद वस्त्रों वाले) और दिगम्बर (नग्न) जैन धर्म के अधिकतर अनुयायी व्यापारी वर्ग से हैं।

दूसरा आंदोलन गौतम बुद्ध (563-483 ई. पू.) द्वारा प्रारंभ किया गया जो महावीर के समकालीन युवा थे। उन्होंने चार आर्य सत्यों का प्रचार किया। उन्होंने मध्य मार्ग अपनाया। वे मानते थे कि संसार दुःखमय है और तृष्णा इस दुःख की जड़ है जिसे निम्नलिखित अष्टाङ्गिक मार्ग को अपना कर जीता जा सकता है। यह अष्टांग मार्ग है–

1. सम्यक् दृष्टि	2. सम्यक् संकल्प
3. सम्यक् वाक्	4. सम्यक् कर्म
5. सम्यक् आजीविका	6. समयक् प्रयत्न
7. सम्यक् स्मृति	8. सम्यक् समाधि

मूलतः ये दोनों आंदोलन ब्राह्मण धर्म के एकाधिकार के विरुद्ध थे। दोनों सुधारकों ने अच्छा भौतिक जीवन व्यतीत करने और नीति शास्त्र की आवश्यकता पर बल दिया। दोनों सुधारकों ने भिक्षुओं की एक श्रेणी बनाई, मठों की स्थापना की जिन्हें जैनधर्म में स्थानक और बौद्ध धर्म में 'विहार' कहा जाता था।

बाद में बुद्ध धर्म भी दो भागों में बंट गया–हीनयान और महायान। बाद में एक तीसरा खण्ड वज्रयान भी जुड़ गया। इसके बाद बुद्धधर्म का विश्व के अनेक भागों में प्रचार हुआ–श्रीलंका, म्यांमार, कम्बोडिया, वियतनाम, चीन, जापान, थाइलैण्ड, कोरिया, मंगोलिया और अफगानिस्तान। आज भी इन दोनों की अधिकांश जनता बुद्ध धर्म को मानने वाली है।

हिन्दु धर्म में भी समय के साथ-साथ कई परिवर्तन हुए। इसमें अनेक धार्मिक पक्षों, विश्वासों और मतों का प्रादुर्भाव हुआ। बौद्ध धर्म के समान हिन्दु धर्म के कुछ पन्थों का भी भारत से बाहर के देशों में विस्तार हुआ विशेष रूप से दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में। बाद में हिन्दु परम्परा ने बुद्ध को भी विष्णु का अवतार स्वीकार किया।

पाठगत प्रश्न 3.1

1. हड़प्पन सभ्यता के अवशेष सबसे ज्यादा कहा प्राप्त हुए हैं?

   ....

टिप्पणी

2. हड़प्पन युगीन लोगों का मुख्य पेशा क्या था?

....

3. नव पाषाण युग के प्रमाण कहाँ पाये जाते हैं?

....

4. आप कैसे कह सकते हैं कि हड़प्पा सभ्यता के समय एक भाषा भी हुआ करती थी?

....

5. आप कैसे कह सकते हैं कि हड़प्पा कालीन लोग शिल्प कला में निष्णात थे?

....

6. आर्यों के वैदिक साहित्य के कुछ ग्रन्थों के नाम लिखें।

....

7. मनुष्य मुक्ति/मोक्ष कैसे प्राप्त कर सकता है?

....

8. वैदिक यज्ञ प्रारम्भ में कैसे किए जाते थे?

....

9. राजाओं द्वारा अपनी स्थिति को मजबूत करने के लिए कौन-कौन से यज्ञ किए जाते थे?

....

10. उत्तर वैदिक युग में धार्मिक कृत्यों में कौन-कौन से परिवर्तन आए?

....

11. आर्यों के प्रमुख मनोरंजन के साधन क्या थे?

....

12. ईसा पूर्व छठी शताब्दी में उत्तरी भारत और उत्तरी दक्षिण के कुछ महाजनपदों के नाम लिखिए।

....

13. जैन धर्म किन सम्प्रदायों में बंट गया था?

....

14. अष्टांगिक योग में कितने मार्ग हैं?

....

15. जैनियों और बौद्धों के मठ क्या कहलाते थे?

....

16. बौद्ध धर्म की तीन शाखाओं के नाम लिखिए।

....

3.5 फारसी आक्रमण और इसका भारतीय संस्कृति पर प्रभाव

छठी शताब्दी ई.पू. के पूर्वार्द्ध में उत्तरपश्चिमी भारत में अनेक छोटे मोटे जनजातीय राज्य थे। इन लड़ने वाली जनजातियों में एकता स्थापित करने वाली कोई सर्वाधिकारवादी शक्ति नहीं थी। इस प्रदेश की राजनैतिक फूट का लाभ इखामनी शासकों ने उठाया। ईरान के इखामनी वंश के संस्थापक थे साइरस और उसके उत्तराधिकारी डेरियस जिन्होंने पंजाब और सिंध के कुछ भागों को अपने अधिकार में कर लिया। ऐसा माना जाता है कि इखामनी साम्राज्य का यह सबसे उपजाऊ और आबादी वाला क्षेत्र था। इखामनी सेना में भारतीय लोगों को भी भर्ती कर लिया गया।

उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र में फारसी शासन प्राय: दो शताब्दियों तक रहा। इस अवधि में दोनों क्षेत्रों में निश्चय ही नियमित सम्पर्क रहा होगा। संभवत: स्काइलैक्स के समुद्री अभिमान ने ईरान और भारत के बीच व्यापार और वाणिज्य को बढ़ाया होगा। कुछ प्राचीन फारसी सोने और चांदी के सिक्के भी पंजाब में मिले हैं।

यद्यपि बहुत प्राचीन काल से ही उत्तर पश्चिमी सीमा के पहाड़ी दर्रो का प्रयोग किया जाता रहा होगा परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि डेरियस पहली बार इन्हीं दर्रो से भारत में दाखिल हुआ। बाद में एलेक्जेण्डर की सेना भी इसी दर्रे से आई जब उसने पंजाब पर आक्रमण किया।

मौर्य साम्राज्य का प्रशासनिक ढांचा कुछ हद तक फारसी इखामनी शासकों के प्रशासन से प्रभावित हुआ। फारसी पद 'सत्रप' का प्रयोग भारतीय प्रादेशिक राज्यपालों द्वारा क्षत्रप के रूप में काफी समय तक किया जाता रहा।

फारसियों के साथ संबंधों का सांस्कृतिक प्रभाव भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। फारसी लेखक भारत में एक नई लिपि लेकर आए। इसे खरोष्ठी कहा जाता है। यह लिपि आरंभिक लिपि

से विकसित हुई जो दायें से बायीं ओर लिखी जाती थी। अशोक के बहुत से शिलालेख जो उत्तर पश्चिम भारत में पाये गये हैं, इसी खरोष्ठी लिपि में ही लिखे गये हैं। यह लिपि उत्तर पश्चिम भी भारत में ईसा पश्चात् तीसरी शताब्दी तक प्रयोग की जाती रही। अशोक की विज्ञप्तियों की प्रस्तावना में भी फारसी प्रभाव देखा जा सकता है। मौर्यकालीन कला और वास्तुकला पर भी फारसी कला का प्रभाव हुआ। अशोक के एक पत्थर से तराशे खम्भों पर लिखे अभिलेख और उनकी घंटियों के आकार के शीर्ष पर्सेयोलिस में मिले इखामनी शासकों के विजय स्तम्भों से कुछ कुछ मिलते जुलते हैं।

चन्द्रगुप्त मौर्य के दरबार में चन्द्रगुप्त मौर्य का अपने जन्मदिन पर शाही केश स्नान फारसी प्रभाव को प्रकट करता है। यह विशिष्ट फारसी शैली में ही होता था। अर्थशास्त्र में भी वर्णन आता है कि जब भी राजा, वैद्य अथवा किसी संन्यासी से विचार विमर्श करे तो उसे ऐसे कक्ष में बैठना चाहिए जहां पवित्र अग्नि जल रही हो। यह प्राचीन ईरानियों के फारसी धर्म के प्रभाव को प्रकट करता है।

3.6 यूनान (मकदूनिया) का आक्रमण और भारतीय संस्कृति पर इसका प्रभाव

ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में यूनानी और फारसियों के बीच पश्चिमी एशिया पर अधिकार करने के लिए युद्ध हुए। अन्ततः मकदूनिया के यूनानियों ने सिकन्दर के नेतृत्व में इखामनी साम्राज्य को नष्ट कर दिया। उसने एशिया माइनर, ईराक, ईरान आदि देशों को जीत लिया और फिर भारत की ओर कूच किया। यूनानी इतिहासविद् हेरोडोटस के अनुसार, सिकन्दर भारत की बेशुमार दौलत से बहुत अधिक आकृष्ट हुआ था।

सिकन्दर ने जिस समय भारत पर आक्रमण किया, उत्तर पश्चिमी भारत छोटी छोटी अनेक रियासतों में बंटा हुआ था। इन रियासतों में परस्पर एकता न होने के कारण यूनानियों को एक एक करके रियासतों को जीतने में सहायता मिली। फिर भी सिकन्दर के सैनिकों ने जब मगध के नन्द की विशाल सेना और ताकत के बारे में सुना, तो उन्होंने आगे बढ़ने से इनकार कर दिया। सिकन्दर को वापस लौटना पड़ा। वह मकदूनिया के रास्ते वापिस जाते हुए केवल 32 वर्ष की अल्पायु में ही बेबीलान में मृत्यु को प्राप्त हुआ। सिकन्दर को अपनी जीती हुई रियासतों को सुसंगठित करने का समय ही नहीं मिला। अधिकांश जीती हुई रियासते उनके शासकों को वापिस कर दी गईं जिन्होंने उसकी सत्ता के सामने झुकना स्वीकार किया। उसने पूर्वी यूरोप और पश्चिमी एशिया के बहुत बड़े जीते हुए भाग को तीन प्रमुख भागों में विभाजित करके तीन यूनानी राज्यपालों के सुपुर्द कर दिया। अपने साम्राज्य के पूर्वी भाग को उसने सेल्यूकस निकेटर को दिया गया जिसने सिकन्दर की मृत्यु के बाद अपने आप को राजा घोषित कर दिया।

यद्यपि मकदूनियां और प्राचीन भारतीयों के संबंध बहुत थोड़े समय ही रहे परन्तु इनका प्रभाव काफी बड़ी मात्रा में पड़ा। सिकन्दर का आक्रमण यूरोप को पहली बार भारत के

बहुत समीप ले आया क्योंकि भारत और पश्चिम के मध्य समुद्री और स्थलीय मार्ग खुल गए। बहुत निकट के व्यापारिक संबंध भी स्थापित हुए। व्यापारी और शिल्पी इन रास्तों से आने जाने लगे। सिकन्दर ने अपने मित्र नियरकस को सिन्धु के मुहाने से लेकर फरात नदी तक बन्दरगाहों के लिए उचित स्थान ढूंढ़ने के लिए कहा था। यूनानी लेखकों ने हमारे लिए इन क्षेत्रों के विषय में बहुत महत्त्वपूर्ण भौगोलिक जानकारी प्रदान की है।

उत्तरपश्चिमी क्षेत्रों की परस्पर युद्धरत रियासतों को जीतकर सिकन्दर के आक्रमण ने इस क्षेत्र में राजनैतिक एकता का मार्ग प्रशस्त किया। ऐसा प्रतीत होता है कि सिकन्दर के इस अभियान से चन्द्रगुप्त को इस क्षेत्र को जीतने में सहायता मिली और उसने सेल्यूकस को हरा कर पूरे उत्तरपश्चिमी क्षेत्र अफगानिस्तान तक को जीतकर अपने अधीन कर लिया।

यूनानी कला का प्रभाव भारतीय मूर्तिकला पर भी दिखाई देता है। यूनानी और भारतीय शैलियों ने मिलकर गांधार कला शैली को जन्म दिया। भारतीयों ने यूनानियों से सोने और चाँदी के सुघड़ और सुन्दर डिजाइन वाले सिक्के बनाने सीखे। यूनानियों ने भारतीय ज्योतिष को भी कुछ सीमा तक प्रभावित किया।

आरियान, एडमिरल नियारकस और मेगस्थिनीज जैसे यूनानियों द्वारा छोड़े गए विवरणों से हमें उस समय के उत्तरी और उत्तर पूर्वी भारत की सामाजिक और आर्थिक स्थिति के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है। वे हमें उस समय की उन्नत और विकसित शिल्प कला, विश्व के अन्य भागों से सुदृढ़ व्यापारिक सम्बन्धों और देश की भौतिक समृद्धि के विषय में सूचनाएँ प्रदान करते हैं। भारतीय काष्ठ कला के विकसित व्यापार के विषय में भी पर्याप्त सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि नियारकस के नेतृत्व में सिकन्दर द्वारा भारतीय पश्चिमी तट के साथ-साथ भेजा गया जहाजी बेड़ा भी भारत में ही बनाया गया था।

सिकन्दर के आक्रमण से पश्चिमी देशों को भारतीय जीवन और विचारों को जानने का अवसर मिला। ऐसा कहा जाता है कि प्राचीन भारतीय धर्म और दर्शन के सिद्धान्त और विचार सिकन्दर द्वारा बनाए गए मार्ग से ही रोम साम्राज्य में पहुँचे।

यूनानी लेखकों ने सिकन्दर के आक्रमण के विषय में तिथियों सहित जो लिखित विवरण छोड़े, उनसे प्राचीन भारतीय इतिहास के कालक्रम को जोड़ने में पर्याप्त सहायता प्राप्त होती है। सिकन्दर के आक्रमण की तिथि 326 ई. पू. भारत की ऐतिहासिक घटनाओं को क्रम से आयोजित करने में मील का पत्थर सिद्ध होती है।

3.7 भारतीय संस्कृति के आदर्श प्रतीक–अशोक महान

भारत के इतिहास में अशोक का एक विशिष्ट स्थान है। उसकी सार्वभौमिक शांति, हिंसा और धार्मिक एकता की नीतियों का विश्व के अन्य शासकों में कहीं उदाहरण नहीं मिलता।

टिप्पणी

अशोक वह सम्राट था जिसने सफलतापूर्वक राज्यशासन को आदर्शवाद और दर्शन के साथ जोड़ा। अन्य शासकों की भांति अशोक ने भी अपना राज्य शासन 'कलिङ्ग की विजय' युद्ध से प्रारंभ किया। इस युद्ध में जीवन और सम्पत्ति के अंधाधुंध विनाश ने उसकी चेतना को इतना जबर्दस्त आघात पहुंचाया कि उसने दुबारा कभी युद्ध न करने का संकल्प किया। इसके विपरीत उसने 'धम्मविजय' की नीति को अपनाया अर्थात् 'धर्म की विजय'। अपने 13वें शिलालेख में अशोक कहता है कि अच्छी विजय वही है जो दया और गुणों से प्राप्त की जाय। एक राजा के ऐसे निर्णय ने ऐसे समय में जब सैनिक शक्ति ही ताकत का प्रतीक मानी जाती थी, उसे इतिहास में एक अद्वितीय स्थान प्राप्त करवा दिया।

अशोक पूरी तरह से मानवतावादी था। उसकी नीतियां प्रजा के कल्याणार्थ ही होती थीं। उसका धर्म सामाजिक उत्तरदायित्व पर आधारित था। ब्राह्मणों को भृत्यादि निम्नस्तरीय लोगों को सम्मान देना, बड़ों की आज्ञा का पालन, जीवों की हत्या का निषेध आदि मूल्यों को महत्त्व देते हुए उसने धर्म में लोगों को धार्मिक एकता अपनाने के लिए कहा। इस धर्म ने सभी सम्प्रदायों के गुणों को समाहित किया। यद्यपि वह स्वयं बौद्ध धर्म का अनुयायी था उसने अपनी प्रजा पर अपना व्यक्तिगत धर्म थोपने का कभी प्रयत्न नहीं किया। अपने सुप्रसिद्ध 12वें प्रमुख शिलालेख में वह कहता है कि सभी सम्प्रदायों को आदर प्रदान करने में ही उसके अपने धर्म की विशेषता है।

अशोक ने अपनी प्रजा के कल्याण के लिए अनेक सकारात्मक उपाय किए। उन्होंने 'धम्म महामात्य' नामक अधिकारी नियुक्ति किये जो जनता के कल्याण के कार्यों की देखभाल करते थे। वे न केवल राज्य के महत्त्वपूर्ण भागों में बल्कि देश के दूरदराज के प्रान्तों में भी कार्य करते थे। साथ ही वे सभी धर्मों के अनुयायियां के बीच रहकर कार्य करते थे।

इस प्रकार अशोक एक ऐसा दयालु शासक था जिसने राजकीय विशेष उद्देश्य को पूरा करने के लिए एक विशिष्ट प्रकार के अधिकारियों की आवश्यकता का अनुभव किया।

अशोक ने, राजा के रूप में, अपने लिए भी एक उच्च आदर्श निर्धारित किया। वह अपने को प्रजा का पिता और प्रजा को अपनी सन्तान समझता था। उसने अपने विचारों और दर्शन को पत्थर के खम्भों और शिलाओं पर खुदवाकर जनता तक पहुंचाया। ये शिलालेख मौर्य कालीन वास्तुकला और अभियान्त्रिक कौशलों की अभूतपूर्व मिसाल हैं। ये उस समय के जीवन्त स्मारक हैं।

अशोक ने अपनी प्रजा को समझाया कि कर्मकाण्ड पर धन व्यय करना व्यर्थ है। उन्होंने लोगों को अहिंसा पर चलने का परामर्श दिया। उसने स्वयं शाही शिकार और मनोरञ्जनार्थ भ्रमण आदि छोड़ दिए। इसके स्थान पर उसने धर्म के प्रचार के लिए धर्मयात्राएं प्रारम्भ कीं। अपने साम्राज्य को एक समान धर्म; एक समान भाषा, और व्यवहारत: एक समान लिपि (ब्राह्मी) प्रदान करके उसने राजनैतिक एकता भी लाने का प्रयत्न किया। बौद्ध युग से ही भारत धर्मनिरपेक्ष राज्य रहा है। यद्यपि वह स्वयं बौद्ध धर्म का अनुयायी था, उसने कभी भी दूसरों के ऊपर इस धर्म को नहीं थोपा बल्कि धार्मिक सहिष्णुता की नीति अपनाई। वह गैर बौद्ध-अनुयायियों और बौद्ध-विपक्षी मतावलंबियों को समान रूप से उपहार और अनुदान प्रदान करता था।

अशोक का यश उन प्रयत्नों पर भी निर्भर है जो उसने विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में शांति का प्रचार करने के लिए किए। उसने यूनानी साम्राज्य में अपने दूत भेजे, और पश्चिमी भारतीय सभ्यता दूर दूर तक फैलती चली गई। एक बौद्ध परम्परा के आधार पर अशोक ने अपने दूत श्रीलंका, और मध्य एशिया तक के दूर दराज के क्षेत्रों तक भेजे। बौद्ध धर्म विश्व के विभिन्न भागों में फैलता चला गया। यद्यपि आज भारत में बौद्ध धर्म कोई बहुत बड़ी शक्ति नहीं है फिर भी यह श्रीलंका और सुदूर पूर्वी देशों में आज भी अपनी लोकप्रियता बनाए हुए है।

वर्ण व्यवस्था जो प्रायः जातिव्यवस्था के रूप में जानी जाती है, वैदिक युग में प्रारंभ हुई और धीरे धीरे सामाजिक संगठन के रूप में पूरे देश में, संपूर्ण भारत में, प्रधान संगठन के रूप में उभरी। नये धर्मों और दर्शन के साथ-साथ नगरों के विकास, शिल्पकला और व्यापार के प्रसार ने हमारे देश में सांस्कृतिक एकता की इकाई को बढ़ावा दिया। अशोक ने पूरे देश को एक शासन के अंतर्गत संगठित किया और राजकीय नीति के रूप में युद्ध का परित्याग किया। दूसरी तरफ उसने प्रतिज्ञा की कि वह समस्त जीवित प्राणियों के प्रति अपने ऋण को प्रत्यर्पित करने का प्रयत्न करता रहेगा।

3.8 कला और वास्तुकला-आरंभिक मौर्यकाल

कला और वास्तुकला के क्षेत्र में मौर्यो का योगदान प्रशंसनीय रहा। अशोक ने बुद्ध के जीवन की भिन्न भिन्न घटनाओं की स्मृति में 84000 स्तूप बनवाए। मैगस्थनीज के अनुसार पाटलिपुत्र का वैभव ईरान के शहरों से कम न था।

अशोक के अभिलेख जिन स्तम्भों पर खुदवाये गये वे एक चमकीले बलुआ पत्थर के बने हैं और इनके शीर्ष पर घंटाकृतियां हैं। सर्वोत्तम सुरक्षित अशोक के शिलालेख बिहार के लौरिया नन्दनगढ़ में प्राप्त हुए हैं। यह 32 फीट लम्बे खम्बों के ऊपर 50 टन की बैठे हुए शेर की मूर्ति है, जो उत्कृष्ट अभियान्त्रिक चमत्कार का उदाहरण है। रामपुरा का स्तम्भ जिस पर बैल की मूर्ति बनी है, मौर्य शिल्पकला का उत्कृष्ट उदाहरण है। सबसे अधिक प्रसिद्ध स्तम्भ सारनाथ में है जिसके ऊपर चार सिंह तथा धर्मचक्र बना हुआ है। आप इससे परिचित ही हैं क्योंकि यही आधुनिक भारत गणराज्य की राष्ट्र मुद्रा के रूप में स्वीकृत कर लिया गया है।

स्तम्भों के अतिरिक्त और भी कई मौर्यकालीन आकृतियाँ प्रकाश में आई हैं। सबसे अधिक प्रसिद्ध है दीदारगंज से प्राप्त यक्षी की मूर्ति। इन मूतियों का सौन्दर्य इनकी कारीगरी की शुद्धता और इस तथ्य में है कि ये पूरे एक समूचे पत्थर से बनाई गई है। स्तम्भों के समान इन मूर्तियों पर भी अनुपम चमक है जिसे मौर्यन पालिश कहा जाता है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इन मूर्तियों की चमक में आज तक इतनी सदियों के बाद भी कोई कमी नहीं आई। इसके अतिरिक्त इन सभी शिलालेखों में जो भाषा प्रयोग की गई है, वह प्राकृत है जो उस समय देश की राष्ट्र भाषा रही होगी। इनमें सबसे प्राचीन भारतीय लिपि ब्राह्मी लिपि का प्रयोग किया गया है।

3.9 मौर्योत्तर काल में सांस्कृतिक विकास

यद्यपि यूनानी, शक, पार्थियन और कुषाण विदेशी थे परन्तु वे सब शीघ्र ही स्थानीय जनता में घुलमिल गए। क्योंकि ये सब योद्धा थे, अतः नीति निर्माताओं द्वारा इनको क्षत्रिय वर्ग में रखा गया । यह भी ध्यान देने योग्य है कि उत्तर मौर्य काल में ही इतने बड़े पैमाने पर विदेशियों का भारतीय समाज में मिश्रण हुआ। अनुमानतः हम कह सकते हैं कि सामान्य रूप में 200ई. पूर्व से 300ई. पश्चात् तक हमारे देश के धर्म, कला और विज्ञान तथा तकनीक में तथा राजनैतिक एवं आर्थिक स्तर पर बहुत महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। अनेकों दस्तकारियों के विकास के साथ-साथ समुद्री और भूमिगत रास्तों से विदेशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध सुदृढ़ हुए।

अनेक विदेशी शासकों ने वैष्णव धर्म को अपनाया। बेसनगर स्तम्भ के शिलालेख में यूनानी राजा अन्त्यल्किदास के यूनानी दूत हेल्योडोरस ने अपने को भागवत (विष्णुभक्त) घोषित किया। इसी प्रकार कनिष्क के कुछ सिक्कों पर भी शिव की मूर्ति मिली है। कुषाण वंशी एक राजा अपने आप को वासुदेव कहलाता था जिससे उसके वैष्णव होने का परिचय मिलता है।

क्या आप कनिष्क के राज्यारोहण के वर्ष अर्थात् 78 ई. का महत्व जानते हैं। यह शक संवत् के प्रारम्भ का द्योतक है।

विभिन्न विदेशी वर्गों के साथ भारतीयों की अन्तः क्रिया में उन्होंने एक न एक भारतीय धर्म अपना लिया। कुछ विदेशी ताकतों ने बौद्ध धर्म अपनाया क्योंकि इसमें जाति की समस्या से सामना नहीं करना पड़ा। मानेन्द्र ने बुद्ध धर्म अपनाया। कनिष्क ने भी इस धर्म के प्रति अपनी सेवाएँ समर्पित की। लेकिन इस बढ़ती लोकप्रियता के कारण बौद्ध धर्म में एक महान परिवर्तन आया। अपने मौलिक रूप में बौद्ध धर्म विदेशियों के लिए बहुत जटिल था। इसलिए उन्होंने इसका एक सरल रूप आविष्कृत किया जिसके माध्यम से वे अपनी धार्मिक आकांक्षाओं की पूर्ति कर सकते थे। इसी काल में बौद्ध धर्म दो शाखाओं में बंट गया - महायान (बड़ा चक्र) और हीनयान (छोटा चक्र)। महायानी मूर्ति पूजा विधि विधानों और बुद्ध के पूर्व जन्मों बोधिसत्वों में विश्वास करते थे। जबकि हीनयान प्राचीन बौद्धधर्म के नियमों पर चलते रहे। महायान को कनिष्क से शाही संरक्षण प्राप्त हुआ। जिसने इसकी शिक्षाओं का प्रचार करने के लिए चतुर्थ बौद्ध संगति का आयोजन किया और उनकी स्मृति में अनेक स्तूप भी बनवाये।

कला और मूर्तिकला

मध्य एशियाई आक्रमणों से भारतीय कला और मूर्तिकला के क्षेत्र में और अधिक विकास हुआ। पश्चिमी दुनिया के साथ निकट सम्बंधों के फलस्वरूप भारतीय कला में कई नई शैलियों का विकास हुआ। सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण विकास गांधार स्कूल आफ आर्ट के रूप में हुआ। इस शैली ने रोम और यूनान दोनों की ही कलाकृतियों के लक्षणों को ग्रहण

किया। कुषाण काल की बुद्ध की कई मूर्तियों में बुद्ध का चेहरा यूनानी देवता अपोलों से मिलता है। उनके बाल यूनानी रोमन शैली में बनाए गए हैं और उनके वस्त्र भी रोमन 'टोगा' की शैली में व्यवस्थित किए गये हैं। कुषाण काल में विभिन्न शैलियों में प्रशिक्षित शिल्पकारों को एक साथ काम करने का अवसर मिला।

मथुरा भी जो भारतीय कला शैली का केन्द्र थी, आक्रमणों से प्रभावित हुई। मिट्टी और लाल पत्थर की यहां से कई मूर्तियां प्राप्त हुई हैं जिन पर शक-कुषाण प्रभाव परिलक्षित होता है। इनमें सबसे प्रसिद्ध मूर्ति है मथुरा की शीर्षरहित कनिष्क की मूर्ति जबकि पूर्ववर्ती बौद्धधर्मियों ने बुद्ध को प्रतीकों के माध्यम से ही चित्रित किया था, मथुरा शैली ने पहली बार बुद्ध का चेहरा और आकृति बनाई। जातक जैसी लोक कथाओं को चट्टानों के बड़े फलकों पर चित्ररूप में उकेरा गया। बुद्ध की मूर्तियों के अतिरिक्त जो उस समय बहुत बड़ी संख्या में बनाई गईं, महावीर के बुत भी बड़ी संख्या में बनाए गए।

दक्कन और दक्षिणी भारत

मौर्यों के अधीन दक्कन में सातवाहनों की स्थिति बहुत सुदृढ़ थी। अशोक की मृत्यु के बाद, वे पूर्ण रूप से स्वाधीन बन गए। वे बहुत शक्तिशाली हो गए और गोदावरी नदी के किनारे पर पैठन (प्रतिष्ठान) को उन्होंने अपनी राजधानी बनाया। सातवाहनों के विदेशी सत्रपों विशेषत: शकों के साथ युद्ध होने लगे। विशेषरूप से गौतमपुत्र और उसके बेटे वसिष्ठपुत्र सत्कर्णी के समय में सातवाहनों की शक्ति बहुत बढ़ गई। उन्होंने अपने राज्य का विस्तार किया, वनों को काटा, सड़कें बनाईं और अपने राज्य को भली प्रकार शासित किया। नये शहरों का विकास हुआ और दूर दराज के देशों जैसे पर्शिया, ईराक और कम्बोडिया से व्यापार करना प्रारम्भ किया।

कलिङ्ग का खारवेल

एक अन्य राज्य जो मौर्यों के बाद महत्त्वपूर्ण स्थिति को प्राप्त किया, वह था कलिङ्ग। कलिङ्ग राज्य के अंतर्गत आधुनिक उड़ीसा और उत्तरी आन्ध्र प्रदेश के भी कुछ भाग सम्मिलित थे। इसका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शासक था खारवेल। उदयगिरि की एक जैन गुफा में हाथीगुम्फा शिलालेख उसके राज्य के विषय में विस्तृत सूचना प्रदान करता है लेकिन दुर्भाग्यवश वह अभी तक पढ़ा नहीं जा सका है। इतना तो निश्चयपूर्वक ज्ञात हुआ है कि वह एक महान प्रशासक तथा बहादुर योद्धा था। उसने जनता की भलाई के लिए धर्मपरायणता और जनोपयोगी कार्य किए जैसे सड़कें बनवाईं, बगीचे बनवाए।

दक्षिण भारत

कृष्णा और तुंगभद्रा नदी के दक्षिण में जो क्षेत्र हैं वह दक्षिण भारत कहलाता है। यह चोलों का प्रदेश था। चेर और पाण्ड्या निरन्तर परस्पर युद्ध करते रहते थे।

स्रोत

इन राज्यों के बारे में और यहां के निवासियों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के प्रमुख स्रोत है संगम साहित्य। इसलिये ईसापूर्व पहली शताब्दी के प्रारंभ से लेकर ईसा पश्चात् दूसरी शताब्दी के अंत तक दक्षिण भारत के इतिहास का काल 'संगम काल' कहलाता है।

चोल

करिकाल इस राज्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शासक था। उसने चेर और पाण्ड्यों की संयुक्त सेनाओं को पराजित किया। उसने सीलोन से किए गए आक्रमणों को भी पीछे धकेल दिया। करिकल ने बहुत कल्याणकारी कार्य भी किए। उसने कई नहरें बनवाईं जिससे कावेरी का पानी सिंचाई व्यवस्था के काम आ सके। करिकाल ने कला और साहित्य की कृतियों को भी प्रोत्साहित किया। वह वैदिक धर्म का अनुयायी था।

पाण्ड्य

पाण्ड्य साम्राज्य एक महिला राजा द्वारा स्थापित किया गया। उसके पास विशाल सेना थी। उसने भी व्यापार को बढ़ावा दिया और कला और साहित्य को प्रोत्साहित किया।

जीवन और संस्कृति

इस काल के लोगों का जीवन सीधा सादा था। वे संगीत नृत्य और कवित्व के प्रेमी थे। अनेक संगीत वाद्य ढोल, वंशी, बीन बांसुरी आदि उस समय प्रचलित थे। अधिकतर लोग घाटियों में रहते थे और उनमें से अधिकांश लोग किसान थे। कुछ अन्य गडरिये थे। इनमें कलाकार और शिल्पकार भी थे जो प्राय: शहरों में रहते थे। विशेषत: समुद्रतटवर्ती इलाकों में व्यापारी थे और समुद्री मार्ग से व्यापार करते थे।

समाज

ग्रीक, कुषाण, शक,पार्थियन आदि यवन कहलाते थे। वे शीघ्र ही भारतीय समाज में घुलमिल गए और उन्होंने भारतीय नाम और अंतर्जातीय विवाह आदि भी किए। यहां तक कि उनके सिक्कों पर भी भारतीय देवताओं जैसे विष्णु, गणेश और महेश आदि की मूर्तियां बनने लगीं। उन्होंने सरलता से ही भारतीय समाज को अपना लिया था, इस तथ्य से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि विदेशी शासकों ने क्यों बौद्ध धर्म को संरक्षण दिया।

हर्षवर्धन का युग

राजा हर्षवर्धन ने यह निर्णय लिया कि इन छोटे छोटे युद्धरत शासकों को पराजित करके अपने राज्य में शामिल कर लिया जाय। उसने ऐसा करने में अपने जीवन के छ: महत्त्वपूर्ण

वर्ष लगा दिए। एक चीनी यात्री ह्यूनसांग और सम्राट के दरबारी कवि बाण ने हर्ष के राज्य के विषय में विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। ह्यूनसांग के अनुसार हर्षवर्धन का प्रशासन बहुत उत्तम था। उसने यह भी बताया कि उस समय परिवारों का पञ्जीकरण भी नहीं होता था और किसी प्रकार की जबर्दस्ती से मजदूरी नहीं करवाई जाती थी।

हर्ष की धार्मिक गतिविधियां

क्या आप जानते हो कि हर्ष ने अनेक चिकित्सालय और धर्मशालाएं बनवाईं। उसने बौद्ध धर्म और हिन्दु धर्म को भी अनुदान प्रदान किया। अपने जीवन के परवर्ती समय में वह बौद्धधर्म की ओर अधिक झुक गया।

हर्ष की साहित्यिक गतिविधियों में कुछ महत्त्वपूर्ण नाटक भी सम्मिलित हैं यथा नागानंद, रत्नावली और प्रियदर्शिका। उसने विद्वानों का समाज एकत्रित किया जैसा कि ह्यूसांग और बाणभट्ट के विवरणों से स्पष्ट है। बाण ने हर्ष की प्रसिद्ध जीवनी हर्षचरितम् लिखी और साहित्यिक ग्रंथ कादम्बरी की भी रचना की।

दक्कन के राज्य और दक्षिण

आपने सातवाहनों के विषय में पढ़ा जिन्होंने लंबे समय दक्कन पर राज्य किया। उनके पतन के बाद दक्कन में कई अन्य राज्य उभर कर आए। उनमें सर्वप्रथम थे वाकाटक जिन्होंने एक मजबूत राज्य की स्थापना की परन्तु वे अधिक समय तक टिक नहीं सके।

वाकाटकों के पश्चात् वातपी और कल्याणी के चालुक्य आए। चालुक्य वंश का प्रभावशाली राजा था पुलकेशिन। चालुक्यवंशीय राजा उत्तर की ओर राष्ट्रकूटों से और दक्षिण की ओर पल्लवों से लड़ते रहे। चालुक्य शासन 753 ई. पश्चात् समाप्त हो गया जब राष्ट्रकूटों ने उन्हें परास्त कर दिया।

वातपी राजधानी एक समृद्ध नगर था। अरब, ईरान और लालसागर बन्दरगाह से पश्चिमी और दक्षिणपूर्वी देशों से व्यापार होता था। पुलकेशिन द्वितीय ने पर्शिया के राजा खुसरों के पास एक दूत भेजा था। चालुक्यों ने कला और धर्म को संरक्षण प्रदान किया। उन्होंने मंदिर और दक्कन की पहाड़ियों में गुफा मंदिर बनवाए। चालुक्यवंशीय और राष्ट्रकूट राजाओं के तत्त्वावधान में ही एलोरा गुफाओं की अनेक शिल्पकलाकृतियों का निर्माण हुआ।

पाठगत प्रश्न 3.2

1. ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में उत्तरी और उत्तर पश्चिमी भारत के लोगों की सामाजिक और आर्थिक दशा को जानने के लिए सूचना के क्या स्रोत थे?

   ....

2. सम्राट अशोक के अनुसार धम्मविजय क्या है?

   ....

3. अशोक के बारहवें प्रमुख शिलालेख में उसके क्या विचार दिए गए हैं?

   ....

4. अशोक के शिलालेख कहां कहां मिलते हैं?

   ....

5. भारतीय राष्ट्रचिह्न कहां से लिया गया है?

   ....

6. गांधार स्कूल ऑफ आर्ट ने यूनानी और रोमन कलाकृतियों से किन लक्षणों को ग्रहण किया?

   ....

7. मथुरा कला स्कूल के वैशिष्ट्य का वर्णन कीजिए।

   ....

3.10 गुप्त काल में सांस्कृतिक विकास

प्राचीन भारतीय इतिहास का अंतिम चरण ई. पश्चात् चौथी शताब्दी में आरंभ होता है और लगभग आठवीं शताब्दी में समाप्त होता है। गुप्तवंशीय शासकों ने एक बहुत सुदृढ़ और शक्तिशाली राज्य की स्थापना की। उनके द्वारा राज्य की एकता और राजकीय संरक्षण के कारण सांस्कृतिक गतिविधियों में कई गुणा वृद्धि हुई। आपको स्मरण होगा कि यूनानी आक्रमण के कारण विभिन्न भारतीय कलाकृतियाँ यूनानी रोमन शैलियाँ से पर्याप्त मात्रा में प्रभावित हुईं। यह कला अधिकतर बुद्ध और बौद्ध धर्म के विचारों को दर्शाती थी। गुप्तकाल में कला में अधिक सृजनात्मकता आई और हिंदु देवी-देवताओं को भी प्रस्तुत किया जाने लगा।

गुप्तकाल की कलात्मक अभिव्यक्ति का अनुमान गुप्तकाल में विभिन्न प्रकार के सिक्कों पर की गई बारीक कारीगरी और डिजाइनों द्वारा किया जा सकता है। सामान्य योजना के अनुसार सिक्के के एक ओर राजा का चित्र होता था और दूसरी ओर किसी देवी-देवता को उससे संबंधित प्रतीक के साथ चित्रित किया जाता था। राजा को चित्र में कई रूपों में कभी शेर या चीते का शिकार करते हुए या सिंहासन पर बैठकर कोई संगीत वाद्य यंत्र बजाते हुए दिखाया जाता था। सिक्के के दूसरी ओर अधिकतर धन की देवी लक्ष्मी या कुछ सिक्कों पर विद्या की देवी सरस्वती का चित्र अंकित होता था।

सिक्कों के अतिरिक्त, गुप्तकाल की कला स्मारकों और मूर्तियों में भी अभिव्यक्त हुई। इस युग के कुशल कारीगरों ने भारत के आदर्श और दार्शनिक परंपराओं को भी अपने औजारों के कौशल से विभिन्न कला रूपों में सृजन किया। उन्होंने धार्मिक स्थलों के कोने-कोने को देवी देवताओं की मूर्तियों से सुसज्जित किया। देवी देवताओं की मूर्तियों को देवता का प्रतीक माना जाता था इसलिए देवताओं की चतुर्भुज या अष्टभुज मूर्तियों में एक-एक चिह्न या एक शस्त्र पकड़ा हुआ होता था यद्यपि वे मूर्तियाँ मानवाकार में ही होती थीं। देवी देवताओं के मंदिर पत्थर, टेरेकोटा और अन्य सामग्री से बनाए जाते थे।

गुप्तवंशीय कला के उदाहरण देवगढ़ के प्रसिद्ध दशावतार के मंदिर और उदयगिरि की पहाड़ियों की गुफाओं में बने मंदिरों में देखे जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त गुप्त कला के सर्वाधिक प्रसिद्ध उदाहरण, जो आज भी सुरक्षित हैं, वे बैठे या खड़े हुए बुद्ध के रूप में सारनाथ में विराजमान हैं।

सारनाथ में जो कला शैली फली-फूली, उसने हमें बुद्ध की बहुत सुंदर और भव्य मूर्त्तियाँ प्रदान कीं। पत्थर के अतिरिक्त गुप्तकालीन कलाकार कांस्य की मूर्त्तियाँ बनाने में भी कुशल थे। भागलपुर के समीप सुल्तानगंज में बुद्ध की दो मीटर ऊँची कांस्य प्रतिमा मिली है। इस काल के गुफा-मंदिरों की कला के प्रतीक हैं–एलोरा के प्रसिद्ध गुफा मंदिर।

वास्तुकला

गुप्त काल की वास्तुकला के नमूने पहाड़ों को काटकर बनाई गई गुफाओं (अजंता) और मंदिरों के रूप में हैं जैसे देवगढ़ के दशावतार मंदिर में भवन पत्थर और ईंटों से बनाए गए हैं। कालिदास के काव्य में गुप्त वास्तुकला के उद्धरण प्राप्त होते हैं। कवि ने एक सुनियोजित नगर का चित्र प्रस्तुत किया है जिसमें सड़कों का जाल बिछा है, बाजार है, ऊँचे-ऊँचे गगनचुंबी महल हैं और छज्जों वाले भवन हैं। महलों में कई भवन होते थे। उनमें आँगन, जेल, न्यायालय कक्ष और सभागृह होते थे। वरामदों के रोशनदान छत की ओर खुलते थे जिन पर रात को चांदनी बिखरी हुई होती थी। महलों के साथ मनोरंजन हेतु उद्यान होते थे जो सब प्रकार के मौसमी फूल और वृक्षों से सुसज्जित थे।

गुप्तकालीन वास्तुकला के प्रमाण बहुत कम मिलते हैं तथापि इन गुप्तकालीन मंदिरों के नमूने मध्य भारत के वनों में तथा बुंदेलखण्ड क्षेत्र में पाये गए हैं। इनमें कानपुर जिले के भीतरगांव के मंदिर भी शामिल हैं।

चित्रकला

गुप्तकाल में चित्रकला उन्नति के उच्च शिखर पर थी। अजंता की गुफाएँ (औरंगाबाद) और बाघ गुफाओं (ग्वालियर के पास) के भित्ति चित्र इस बात के प्रमाण हैं। यद्यपि अजंता की गुफाओं के चित्रित चित्र प्रथम शताब्दी से सातवीं शताब्दी ईसवी के हैं लेकिन इनमें से अधिकांश की रचना गुप्तकाल में ही हुई। इन चित्रों में बुद्ध के जीवन की घटनाएँ चित्रित

हैं। जिस सुंदरता से मनुष्य, पशु, वृक्ष आदि के चित्र बनाए गए हैं, वे गुप्तकालीन चित्रकला की उत्कृष्टता आदि भावपूर्णता के सशक्त उदाहरण हैं। चित्रकला के माध्यम से अभिव्यक्ति महत्त्वपूर्ण मानी जाती थी क्योंकि यह आध्यात्मिक आनंद प्राप्त करने का साधन मानी जाती थी।

3.11 पल्लव और चोल शासक

प्राचीन भारत का इतिहास दक्षिणी भारत के दो प्रमुख वंशों पल्लवों और चोलों की कला, वास्तुकला, प्रशासन और विजयों के उल्लेख के बिना अपूर्ण ही रहेगा। ईसा की प्रारंभिक शताब्दियों में दक्षिण में अनेक वंशों का उदय हुआ। उनमें प्रमुख पल्लव कला और वास्तुकला के बहुत बड़े प्रशंसक थे। उनके द्वारा निर्मित महाबलीपुरम की रथ शैली के पहाड़ काट के बनाए गए मंदिरों का सुन्दर उदाहरण है। पल्लव वंशीयों ने कांचीपुरम् में कैलाशनाथ और वैकुण्ठनाथ मंदिरों जैसे ढांचागत मंदिरों का भी निर्माण करवाया। कैलाशनाथ मंदिर एक विशाल मंदिर है जिसमें हजारों मूर्तियां हैं और सम्भवतः भारत में बनाए गए विशालतम मंदिर का एकमात्र उदाहरण है। महाबलीपुरम् (मामल्लपुरम्) में मंदिर रथों के कुछ अन्य भी रूप पाये गये हैं जिसे पल्लवी शासकों द्वारा ही बनाया हुआ मना जाता है। महाबलीपुरम् में बने पगोड़ा भी ईसा पश्चात् प्रथम शताब्दी के माने जाते हैं।

चेन्नई के निकट महाबलिपुरम में स्मारकों का समूह

मंदिर निर्माण का काम ई.पू. पांचवीं शताब्दी के बाद ही प्रारंभ हुआ। उत्तरी भारत में जो मंदिर बनाए गए, नागर शैली में थे जिनमें घुमावदार शिखर, गर्भगृह (मूर्ति का स्थान) और स्तम्भों से युक्त बड़े हाल आदि बनाए जाते थे जबकि दक्षिण में बने मंदिर द्रविड़ शैली में थे जिनमें विमान अर्थात् शिखर, ऊंची ऊंची

सूर्य मंदिर, कोणार्क, उड़ीसा

दीवारों और द्वारों के ऊपर बने गोपुरम से युक्त होते थे। पल्लवों के बाद मंदिर निर्माण की परंपरा दक्षिण में चोलों द्वारा आगे विकसित की गई।

क्या आप जानते हैं कि मंदिर का गांव में प्रमुख केंद्रीय स्थान होता था। यह गांव वालों के लिए एक ऐसा मिलन स्थल होता था जहां वे प्रतिदिन एकत्रित होते थे और समुदाय संबंधी सभी विषयों पर विचार विमर्श किया करते थे। ये विद्यालय का भी काम करते थे। त्योहारों के दिनों में मंदिर के प्रांगण में नृत्य और नाटक आदि का भी आयोजन किया जाता था।

चोल शासकों की उपलब्धियां समुद्र पार तक उनकी विजय और ग्राम-स्तर पर लोकतांत्रिक संस्थाओं को विकसित करने में निहित हैं। ग्राम पंचायत के पास जिसे सभा या उर भी कहा जाता था, व्यापक शक्तियां होती थीं। यह वित्त विषयक मामलों पर भी नियंत्रण रखती थीं। इस सभा के अधीन अनेक समितियां होती थीं जो ग्राम प्रशासन के विभिन्न पक्षों का प्रबंध करती थीं। चोल वंशीय एक शिलालेख से सभाओं की कार्यप्रणाली का विस्तृत विवरण प्राप्त होता है। चोल शासक बहुत अच्छे निर्माता थे। चोलवंशीय शासकों के शासनकाल में मंदिर वास्तुकला की द्रविड शैली अपनी पराकाष्ठा पर थी। इसका खूबसूरत उदाहरण राजराजेश्वर या बृहदेश्वर मंदिर है। इस काल में मूर्तिकला में भी उपलब्धियां प्राप्त की गईं।

धार्मिक तथा धर्मनिरपेक्ष दोनों प्रकार के साहित्य में भी अत्यधिक उन्नति हुई। देश के कई भागों में संस्कृत दरबारों की भाषा बन गई। तमिल साहित्य का भी पर्याप्त विकास हुआ। आलावर, नयनार, वैष्णव शैव सन्तों ने भी अपना बहुमूल्य योगदान किया। देश के कई भागों में यद्यपि संस्कृत का बोलबाला था; इस काल में कई अनेक भारतीय भाषाओं और लिपियों का भी उदय हुआ। हम कह सकते हैं कि प्राचीन काल के अंत तक भारतीय इतिहास में ऐसी संस्कृति विकसित हो चुकी थी जिसने आज तक अपनी पहचान सुरक्षित रखी है।

3.12 वैदिक ब्राह्मण धर्म का पौराणिक हिंदु धर्म में परिवर्तन

गुप्तकाल के बाद सबसे अधिक उल्लेखनीय बिंदु था प्राचीन ब्राह्मणधर्म का पौराणिक हिंदु धर्म में परिवर्तन। बौद्ध धर्म को अब पहले की तरह राजकीय संरक्षण नहीं मिल रहा था। ब्राह्मणवाद प्रमुख होने लगा था। गुप्तवंशीय शासकों ने हिंदुओं के भागवत धर्म को विशेष प्रश्रय दिया। वे अपने आप को भागवत कहते थे, विष्णु की पूजा करते थे और अश्वमेध यज्ञों का आयोजन करते थे, ब्राह्मणों को बड़ी-बड़ी दक्षिणाएँ देते थे और मंदिरों का निर्माण करते थे। इसी युग में पुराणों को संकलित किया गया। विष्णु पूजा का प्रमुख देवता बनकर उभरे और धर्म के रक्षक माने जाने लगे। उनसे संबंधित अनेक कथाओं ने जन्म लिया और उनके सम्मान में संपूर्ण विष्णु पुराण बनाया गया। इसी प्रकार इसी देवता के नाम पर विष्णु स्मृति की भी रचना की गई। इन सबसे अधिक सर्वोपरि चौथी शताब्दी ईसवी में 'वैष्णव कृति' श्रीमद् भागवतपुराण की रचना हुई जिसमें भगवान कृष्ण के प्रति भक्ति का वर्णन था। कुछ गुप्तकालीन शासक शिव की भी उपासना करते थे जिसे संहार का देवता माना जाता

है। भागवत् धर्म जो मूलरूप में बौद्ध धर्म और जैनधर्म के समकालीन था, और उपनिषद के विचारों से प्रादुर्भूत हुआ था, इस काल का सर्वाधिक लोकप्रिय धर्म बन गया। सर्वोच्च देवता विष्णु के दस अवतारों का सिद्धांत प्रचलित हो गया और उनमें कृष्ण को सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाने लगा।

विष्णु के अतिरिक्त, ब्रह्मा, सूर्य, कार्तिकेय, गणेश, दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती तथा कम महत्त्वपूर्ण इंद्र, वरुण, यम आदि भी पूजे जाते थे। सांप, यक्ष और गंधर्व भी सम्मानित होते रहे यहां तक कि पशु-पौधे, नदियां, पर्वत आदि भी सम्मान से देखे जाते थे। बनारस और प्रयाग तीर्थ स्थान बन गए। मूर्ति पूजा लोकप्रिय हो गई। इस प्रकार आधुनिक हिंदू धर्म के मुख्य लक्षणों ने गुप्त वंश के समय से ही आकार धारण कर लिया था।

यद्यपि बौद्धधर्म का ह्रास हो रहा था, फिर भी इसके अनुयायी बहुत थे। इसके अतिरिक्त अजन्ता एलोरा की कलापूर्ण कृतियां, सारनाथ की इस समय की बुद्ध की मूर्तियां सिद्ध करते हैं कि बुद्ध धर्म भी काफी लोकप्रिय था। गुप्त काल में जैन धर्म के भी अनुयायी कम न थे।

3.13 शिक्षण के महत्त्वपूर्ण केंद्र के रूप में नालन्दा का उदय

हर्षवर्धन के राज्य में नालन्दा शिक्षा का एक महान केंद्र बन गया था। विश्व के विभिन्न प्रदेशों से छात्र यहां पढ़ने के लिए आते थे। यद्यपि नालन्दा के सभी टीलों की खुदाई नहीं हो पाई है, फिर भी एक विशाल भवन समूह के प्रमाण पाये गए हैं। कुछ भवन तो चार चार मंजिल वाले थे। ह्यूनसांग के अनुसार नालन्दा में प्राय: 10,800 विद्यार्थियों के रहने की व्यवस्था थी। इसका प्रबंध 200 गांवों से प्राप्त राजस्व से किया जाता था।

यद्यपि यह मठ जैसा शिक्षण संस्थान प्रमुख रूप से महायान बौद्ध धर्म की शिक्षा का केन्द्र था, फिर भी यहां धर्मनिरपेक्ष विषय भी पाठ्यक्रम में सम्मिलित थे जैसे व्याकरण, तर्कशास्त्र, ज्ञान मीमांसा तथा विज्ञान अदि भी यहां पढ़ाए जाते थे। विद्यार्थियों को प्रश्न पूछने तथा तर्क शक्ति को विकसित करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाता था। सक्रिय विचार विमर्श और वाद-विवाद किए जाते थे। हर्ष ने कन्नौज में आयोजित दार्शनिक संसद में भाग लेने के लिए 1000 विद्वान बौद्ध भिक्षुओं को आमंत्रित किया था। अपने विवरण में ह्यूनसांग ने नालन्दा का विस्तृत विवरण दिया है। यह विश्वविद्यालय 12वीं शताब्दी तक बौद्धिक गतिविधियों का केन्द्र बना रहा।

पाठगत प्रश्न 3.3

1. गुप्तकाल के सिक्कों की क्या विशेषताएं थीं?

....

2. दशावतार मंदिर कहां स्थित है?

   ....

3. उदयगिरि के गुफा मंदिर किस लिए प्रसिद्ध हैं?

   ....

4. भागलपुर के पास सुलतानगंज में प्राप्त बुद्ध की कांस्य मूर्ति कितनी ऊंची है?

   ....

5. गुप्त कालीन चित्रकला के नमूने कहां कहां पाए जाते हैं?

   ....

6. हर्ष के राज्य में दार्शनिक संसद कहां आयोजित की गई थी?

   ....

3.14 भारत में ईसाई धर्म

परम्परा के अनुसार ईसाई धर्म को भारत में संत थामस प्रथम शताब्दी ई.पू. में लेकर आए थे। दन्तकथाओं के अनुसार पार्थियन बादशाह गोण्डोफर्नीस (19–45 ई पश्चात) ने सीरिया में एक कुशल वास्तुविद की तलाश में अपना दूत भेजा जो उसके लिए एक नया शहर बना सके। दूत अपने साथ संत थामस को लेकर आया जिसने उस बादशाह तथा उसके दरबार के अन्य सभासदों को ईसाई बना दिया। यह दन्तकथा संदिग्ध है। सम्भवत: भारत और पश्चिम के बीच जो व्यापार संबंध बढ़े, उन्हीं के कारण ईसामसीह के शिष्य संत को भारत लाया गया। व्यापारी, शिल्पकार आदि प्रचलित स्थलीय और समुद्री मार्गों से यात्राएं किया करते थे। संत थामस ने भारत के बहुत से भागों में ईसाई धर्म का प्रचार किया। वह मद्रास के पास माइलापुर में मारा गया। संत थामस का मकबरा आज भी उसी जगह बना हुआ है। ईसाइयों का एक बहुत बड़ा समुदाय जो सीरियन ईसाई कहलाते हैं, आज भी केरल में बसे हुए हैं।

ईसाई चर्च भी दो भागों में बंटा हुआ है–रोमन कैथोलिक चर्च और प्रोटेस्टेन्ट चर्च। ईसाइयों की पवित्र पुस्तक बाइबल है। बाइबल के दो भाग हैं–पुराना टेस्टेमेंट और नया टेस्टेमेंट। बाइबल हमारे देश में प्राय: सभी प्रमुख भाषाओं में अनूदित हो चुकी है।

आज भारत में डेढ़ करोड़ से भी अधिक ईसाई हैं। उनके सरक्षण में अनेकों धर्मार्थ संस्थाएं सफलतापूर्वक चल रही हैं। सम्भवत: सबसे अधिक प्रसिद्ध ईसाई समाज सेविका थीं मदर टेरेसा जिन्होंने हमारे देश में निर्धनों और बेघर लोगों की भलाई के लिए बहुत कार्य किया।

पाठगत प्रश्न 3.4

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए

1. भारत में ईसाई धर्म कैसे आया?
2. ईसाई चर्च के दो भाग कौन कौन से हैं?
3. मदर टेरेसा कौन थी?
4. पल्लवों द्वारा कांचीपुरम् में बनाए गए दो संरचनात्मक मंदिरों के नाम लिखिए।
5. पल्लवों तथा चोलों के शासन काल में मंदिर वास्तुकला की विभिन्न शैलियां कौन कौन सी थीं?
6. चोलवंशीयों द्वारा बनाए गए मंदिरों के नाम लिखिए।
7. चोलकालीन मूर्तिकला की शैली क्या थी?
8. महाबलीपुरम् (ममल्लपुरम) में पाए गए उभारदार चित्रों की शैली क्या है?

आपने क्या सीखा

- भारत का एक निरंतर इतिहास रहा है जो 7000 ई.पू. से भी प्राचीन काल से निरंतर चला आ रहा है।
- हड़प्पावासियों ने सबसे प्राचीन नगरों का निर्माण किया जो नगर योजना, सफाई व्यवस्था, नालियों की व्यवस्था तथा चौड़ी-चौड़ी सड़कों से परिपूर्ण थे।
- ग्रामीण लोगों का सबसे महत्त्वपूर्ण पेशा कृषि था।
- वैदिक काल के लोगों ने साहित्य, धर्म और दर्शन आदि विभिन्न क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण योगदान किया।
- उत्तर वैदिक काल में समाज चार वर्णों में विभाजित था, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। महत्त्वपूर्ण धर्म जैसे हिन्दूधर्म, जैनधर्म, बौद्धधर्म आदि धर्मों का उदय हुआ और इनके बीच अंत:मिश्रण से भारतीय संस्कृति समृद्ध बनी।
- प्रारंभिक वैदिक लोग प्राकृतिक शक्तियों की पूजा करते थे और उन्हें देव और देवियों का दर्जा प्रदान किया।
- मौर्य राजाओं ने उत्तरी भारत में बहुत बड़ा साम्राज्य स्थापित किया और अशोक महान के शासन काल में इसने कई क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण उपलब्धियां प्राप्त कीं।
- पल्लव कला और वास्तुकला में मौर्यों का योगदान महत्त्वपूर्ण था। जो बहुत अच्छे निर्माता थे, उनके शासन काल में मंदिर वास्तुकला अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंच गई।

- गुप्तकालीन कला के नमूने देवगढ़ में दशावतार मंदिर और उदयगिरि के गुहा-मंदिरों में देखे जा सकते हैं।
- राजा हर्ष कष्टपूर्ण परिस्थितियों में अपने परिवार को खो देने के बाद थानेश्वर के सिंहासन पर आसीन हुए।
- हर्ष के राज्य का विवरण दो व्यक्तियों ने बड़े विस्तार से दिया है, जिनमें से एक हैं चीनी यात्री ह्यूनसांग और दूसरे हैं उनके दरबारी कवि बाणभट्ट।
- हर्ष एक कुशल और उदार हृदय शासक था। उसने कई कल्याण के कार्य किए। उसने जनता के विशिष्ट सेवकों को विपुल धनराशि प्रदान की, उच्च बौद्धिक क्षमता का प्रदर्शन करने वाले विद्वानों को पुरस्कृत किया और विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों को उपहार देकर धार्मिक गतिविधियों को प्रोत्साहित किया। उसने अनेक अस्पताल और धर्मशालाएं बनवाईं।
- हर्षवर्धन के राज्य में नालन्दा शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण केंद्र बन गया था।
- हर्ष एक साहित्यकार भी थे। उन्होंने स्वयं नाटक भी लिखे और अपने चारों ओर विद्वानों को एकत्रित किया।
- चोलवंशीय राजाओं की उपलब्धियों में उनकी समुद्र पार की विजय भी सम्मिलित है और उन्होंने ग्राम स्तर पर शासन के लिए प्रजातांत्रिक संस्थाएं स्थापित कीं।

पाठान्त प्रश्न

1. आप आर्यों की संस्कृति से हड़प्पाकालीन संस्कृति की कैसे तुलना कर सकते हैं?
2. ई.पू. छठी शताब्दी में किन परिस्थितियों के कारण जैनधर्म और बौद्धधर्म का उदय हुआ?
3. भारतीय संस्कृति पर पर्शियन आक्रमणों का क्या प्रभाव पड़ा?
4. प्राचीन भारतीयों पर मकदूनियन आक्रमण के परिणाम क्या थे?
5. प्राचीन भारत में वैदिक ब्राह्मणवाद से पौराणिक हिन्दुवाद में परिवर्तन कैसे हुआ?
6. परवर्ती शासकों के शासनकाल में भारतीय संस्कृति के विकास को दिखाएँ।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

3.1 1. सिन्धु, घग्घर और इसकी सहायक नदियों के किनारों पर।

2. कृषि

3. 7000 वर्ष ई.पू. बलूचिस्तान के मेहरगढ़ में
4. मुद्राओं पर किसी प्रकार की लिपि अंकित थी।
5. मुद्राओं पर एक सींग वाला गेंडा प्राप्त हुआ जिसे यूनिकार्न कहते हैं। मोहेनजोदाड़ों में नृत्यांगना की एक कांस्य मूर्ति भी प्राप्त हुई है।
6. वेद-ऋग्वेद, अथर्ववेद, सामवेद, यजुर्वेद और ब्राह्मण ग्रंथ, आरण्यक और उपनिषद
7. धर्म, अर्थ, काम के द्वारा
8. वैदिक मंत्रों के उच्चारण के साथ किया जाता था।
9. अश्वमेध, राजसूय; वाजपेय यज्ञ
10. बहुत अधिक कर्मकाण्ड परक हो गया। इन्द्र, अग्नि, वरुण आदि देवों के स्थान पर एक नये त्रिदेव, ब्रह्मा, विष्णु और शिव पूजे जाने लगे।
11. शतरंज, रथ प्रतियोगिता आदि खेल
12. अंग, मगध, कोसल, काशी, कुरु, पाञ्चाल
13. श्वेताम्बर (सफेद कपड़ों वाले), दिगम्बर (नग्न)
14. 8 (आठ)
15. जैनधर्म में स्थानक और बौद्धधर्म में विहार
16. हीनयान, महायान, वज्रयान

3.2

1. आरियन, एडमिरल नियरकस और मैगस्थनीज द्वारा छोड़े गए यूनानी वृत्तान्त
2. करुणा और गुणों द्वारा विजय ही सच्ची विजय हैं, अर्थात् लोगों का कल्याण
3. एक सम्प्रदाय का सम्मान अन्य सम्प्रदायों के सम्मान में है।
4. लारिया, नन्दनगढ (बिहार)
5. सारनाथ में अशोक स्तम्भ पर बनी प्रसिद्ध त्रिमूर्त्ति चिह्न से
6. अपोलो से मिलता जुलता चेहरा, बालों की शैली, वस्त्रों का पहनावा
7. (i) उन्होंने बुद्ध के चेहरे और आकृतियाँ बनानी प्रारंभ की
   (ii) चट्टानों पर और बड़े-बड़े चित्रफलकों पर लोककथाओं को चित्रित किया गया।
   (iii) उन्होंने मूर्त्तियां भी बनाई।

3.3 1. एक ओर राजा का विभिन्न स्थितियों में चित्र तथा दूसरी ओर देवी और उनसे संबद्ध प्रतीक चिह्न

2. देवगढ़ में

3. गुप्तकालीन कला

4. 2 मीटर ऊंची

5. (i) अजंता गुफा के भित्ति चित्र (ओरंगाबाद)

   (ii) ग्वालियर के पास बाघ गुफाएं

6. कन्नौज पर

3.4 1. संत थामस–एक कुशल वास्तुकार ईसाई था। पार्थियन राजा गोंडा फर्नेस ने C19/45 ई. पश्चात् में एक वास्तुकार के रूप में आमंत्रित किया संत थामस ने कई सदस्यों को ईसाई बनाया।

2. (i) रोमन कैथोलिक चर्च

   (ii) द प्रोटेस्टेन्ट चर्च

3. एक प्रसिद्ध ईसाई समाज सेविका जिसने निर्धन और बेघर लोगों के कल्याण के लिए बहुत कार्य किया।

4. कैलासनाथ और बैकुण्ठनाथ मंदिर

5. नागर शैली और द्रविड़ शैली

6. राजराजेश्वर/बृहदेश्वर मंदिर

7. द्रविड़ शैली

8. बैस रिलीफ (रथों के उभरे हुए चित्र)